ममता का घेरा तोड़ो

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

ममता एक प्रकार सकारात्मक भाव है। किसी असहाय प्राणी के प्रति उपकार का भाव सकारात्मक ममता है। आसक्ति, लालच, क्रोध, मान, माया, लोभ नकारात्मक ममता है। मनुष्य को नकारात्मक भाव छोड़कर सकारात्मक भाव धारा वाला होना चाहिए। इस संसार में वस्तु आसक्ति नहीं है। उसके प्रति आसक्ति का भाव परिग्रह है। जब तक वस्तु मेरे पास है तब तक वह मेरी है और जब वह अन्य के पास चली जाएगी तो अन्य की हो जाएगी। ऐसी विचारधारा रखना चाहिए। यह संसार विनाशी है आज है कल नहीं रहेगा। केवल आत्मा ही अविनाशी है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। संसार की पोद्‌गलिक वस्तुएं नाशवान है इनके प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए। आसक्ति से कर्ता भाव आता है। यह मेरा है, यह तुम्हारा है। यह आसक्ति भाव है, यही बंधन है। शरीर मेरा है, मकान मेरा है यह विनाशी सोच है। मैं आत्मा हूं, यह भाव सम्यक् ज्ञान है। संसार की सभी वस्तुएं क्षणिक है इनमें परिवर्तन होता रहता है। जहां आज ऊॅची–ऊॅची अट्टालिकाएं हैं कल वहीं विशाल गर्त भी बन सकता है। प्रकृति का नियम परिवर्तनशील है। प्रकृति के साथ रहकर चलना सीखना चाहिए। संसार में भटकाने वाला तत्व है ममता। स्त्री, बेटा–बेटी, मकान के प्रति आसक्ति संसार में भ्रमण कराती है। आसक्ति से लालच बढता है। गीता में अनासक्त भाव की शिक्षा दी गयी है। वहां कहा गया है कि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़कर नया वस्त्र धारण कर लेता है वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर नये शरीर को धारण कर लेती है। इसलिए मनुष्य को आसक्ति नहीं करनी चाहिए।

यह शरीर नाशवान है, यह संसार नाशवान है। यह चिन्तन अनासक्त भाव है। अनासक्त भाव से मोक्ष की प्राप्ति होती है। कमल का पौधा किचड़ से उत्पन्न होता हैं किन्तु किचड़ का प्रभाव उस पर नहीं होता। वह किचड़ से निर्लिप्त रहता है। जो मनुष्य संसार में रहते हुए संसार में निर्लिप्त रहता है वह मोक्षगामी होता है। महाराज जनक विदेहराज कहलाते थे। सांसारिक

वस्तुओं का उन पर कोई प्रभाव नहीं था। इसीलिए उनको विदेहराज कहा जाता था। इसी प्रकार जो व्यक्ति मोक्ष की इच्छा करता है। उसमें सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह नहीं होना चाहिए। आत्मा और शरीर का पार्थक्य देखना चाहिए। इसीसे अनासक्त भाव जागृत होता है। किसी के प्रति राग–द्वेष न रखना अनासक्त है। कर्त्तव्य भावना से कार्य करना चाहिए। आजकल व्यक्ति स्वार्थी हो गया है। स्वार्थ के कारण दृष्टि नकारात्मक हो गयी है। इससे समाज और राष्ट्र में बिखराव आ रहा है। मैं और मेरापन अहंकार को जन्म देता है। अहंकार से मनुष्य अपने को नहीं जान सकता। कबीरदासजी ने लिखा है– जब मैं था तब हरि नहीं अब हरि है मैं नाहि। अर्थात् जब अहंकार रहता है तो ईश्वर का दर्शन नहीं होता। जब ईश्वर से साक्षात्कार होता है तो अहंकार नष्ट हो जाता है।

अहंकार से व्यक्ति का मानसतन्त्र बिगड़ गया है। आज का मनुष्य धन प्राप्त करने की होड़ में इतना निमग्न हो गया है कि उसे कुछ दिखायी ही नहीं देता। वह धन को साध्य मान लिया है। जबकि धन साधन है साध्य नहीं। अनासक्त व्यक्ति का कोई शत्रु नहीं होगा। सभी प्राणियों के प्रति उसमें समता भाव रहता है। अनासक्त भाव से सुख की प्राप्ति होती है। मुक्ति को प्राप्त करने का यह उत्तम साधन है। इससे मानसिक शान्ति मिलती है। सुख और दुःख में सम रहना अनासक्ति भाव है। धन के प्रति लालसा का त्याग होना चाहिए। लोगों के मस्तिष्क में परिवर्तन होना चाहिए। शोषण रहित समाज तभी बन सकता है। जब व्यक्ति अनासक्त भाव से जीवनयापन करें। शरीर से भी आसक्त नहीं होना चाहिए। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र को त्यागकर नये वस्त्र को धारण करता है, वैसे आत्मा पुराने शरीर को त्यागकर नये शरीर को धारण करता है। परिवर्तन सृष्टि का नियम है। अनासक्त की भावना एक सुन्दर गुण है। दार्शनिक दृष्टि से यदि हम चिंतन करें तो बंधन और मुक्ति जीव के लिए है। जिनसे कर्म बंधे या कर्मों का बंधना बन्ध है। मिथ्यादर्शनादि द्वारों से आए हुए कर्म पुद्गलों का आत्मप्रदेशों में एक क्षेत्रावगाह हो जाना बन्ध है। अनेक प्रकार के शरीर और मानस दुःखों से दुःखी होता है। राग–द्वेषादि के निमित्त से जीव के साथ पौद्गलिक कर्मों का बन्ध निरन्तर होता है। जीव के भावों की विचित्रता के अनुसार वे कर्म भी विभिन्न प्रकार की फलदान शक्ति को लेकर आते हैं, इसी से वे विभिन्न स्वभाव या प्रकृति वाले होते हैं।

मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और मन, वचन, काय की प्रवृत्ति ये सब कर्मों के आने के द्वार होने से आस्रव हैं। इनसे विपरीत सम्यक्त्व, देशव्रत, महाव्रत, मोह व कषायहीन शुद्धात्म परिणति तथा मन, वचन, काय के व्यापार की निवृत्ति ये सब नवीन कर्मों के निरोध के हेतु होने से संवर हैं। आसव्र का निरोध करना ही संवर है। जिनसे कर्म रुकें, वह कर्मों का रुकना संवर है। नगर के द्वार अच्छी तरह बन्द हों, वह नगर शत्रुओं को अगम्य है। जीव का चरम और परम लक्ष्य है– मोक्ष प्राप्ति। जिसने समस्त कर्मों का क्षय करके अपने साध्य को सिद्ध कर सफलता प्राप्त कर ली वह मोक्ष का अधिकारी है। संग्रह आसक्ति को जन्म देता है। जो व्यक्ति जितना संग्रह करता है वह संग्रह के जाल में उतना ही फंसता जाता है।